कमला नेहरू महिला महाविद्यालय ; भुबनेश्वर

हिंदी विभाग ; ई – पत्रिका

अंक – 29

संपादक मंडली

संपादक : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी

सह – संपादक : कु. हाफिज़ा बेगम

कु. बर्षा प्रियदर्शिनी

कु. बांगी हंसदा

संपादकीय

'आप सबको दीपावली की हार्दिक शुभकामनाएं।'

एक लंबे अंतराल के बाद हम आपके समक्ष 'हिंदी भारती' के नये अंक के साथ उपस्थित हैं। कोविड - 19 आज एक वैश्विक महामारी बन सारे विश्व को अपनी करालता से पस्त कर रहा है, पर कोई कोविड हमारे मनोबल को तोड़ नहीं सकता। देर आये पर दुरुस्त आये, हम आपके समक्ष हैं अपने विचारों, छोटे बड़े सपनों, बूझी अबूझी गलतियों, गिर कर खड़े होने की हिम्मत और हर हाल में आगे बढ़ने के जज़्बे के साथ। कृपया इसे पढ़ें एवं अपनी राय हम तक जरूर भेजें। आपकी बात हमारे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, जो हमें हमेशा से प्रेरित करती रही है। हम 'हिंदी भारती' के स्तर को ऊँचा उठाना चाहते हैं, हम चाहते हैं कि विभाग की छात्रायें इस ओर अपना समय दें और स्तरीय लेख लिखें तथा साथ ही संपादन की कला भी सीखें। अतः हमने यह निर्णय लिया है कि 'हिंदी भारती' द्वैमासिक पत्रिका बने। आशा है आप हमारा साथ इसी तरह देते रहेंगे। हम आशा करते हैं कि हर अंक की तरह आप इस अंक को भी स्वीकार करते हुए भविष्य में हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे और आपका आदर और स्नेह हमें इसी तरह मिलता रहेगा। अब हमारी पत्रिका आप हमारे महाविद्यालय के वेब साइट www.knwcbbsr.com पर भी पढ़ सकते हैं।

संपादिका : डॉ. वेदुला रामालक्ष्मी

अनुक्रमणिका

क्र सं.	शीर्षक	विधा	नाम	पृ.स .
1.	आलोक पर्व की ज्योतिर्मयी देवी लक्ष्मी	लेख	हजारी प्रसाद द्विवेदी	5
2.	अरमानों को मिले पंख	कहानी	दीप्तिस्मिता साहू	8
3.	नारी की दशा को दिशा कब मिलेगी	लेख	शशिकला	11
4.	माँ	लेख	मानिनी	13
5.	चित्रा मुद्गल	लेखिका परिचय	संगृहित	14
6.	हथियार	कहानी	चित्रा मुद्गल	16
7.	जाति	कहानी	पिंकी सिंह	26
8.	डर से निडर बनना	कहानी	बाँगी हँसदा	29
9.	जिम्मेदारी	विचार	संगीता प्रधान	30
10.	भगवान दास मोरवाल	लेखक परिचय	बांगी हंसदा	31
11.	धरती माता का पत्र	पत्र	शशिकला	33
12.	सच्चा दोस्त	कविता	पूजा डाकुआ	34
13.	सफल इंसान	कविता	श्रद्धांजली जेना	34
14.	दोस्ती का समय	कविता	इप्सिता साहू	35
15.	जिंदगी	कविता	पूजा डाकुआ	35
16.	सपने	कविता	पिंकी सिंह	35
17.	विश्वास	कविता	बाँगी हँसदा	36
18.	आत्मकथा	कविता	स्वागतिका	36
19.	कुदरत की छाप	कविता	इप्सिता साहू	36
20.	आपकी बात			37
21.	'कलम' भुबनेश्वर, चित्रा मुद्गल जी के साथ	यू ट्यूब लिंक		40
22.	'कलम' भुबनेश्वर, भग्वान दास मोरवाल जी के साथ	यू ट्यूब लिंक		40
23.	यादों के गलियारों से	चित्र स्मृतियाँ		41

आलोक पर्व की ज्योतिर्मयी देवी लक्ष्मी

- हजारी प्रसाद द्विवेदी

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार समस्त सृष्टि की मूलभूत आद्याशक्ति महालक्ष्मी है। वह सत्व, सज और तम तीनों गुणों का मूल समवाय है। वही आद्याशक्ति है। वह समस्त विश्व में व्याप्त होकर विराजमान है। वह लक्ष्य और अलक्ष्य, इन दो रूपों में रहती है। लक्ष्य रूप में यह चराचर जगत ही उसका स्वरूप है और-अलक्ष्य रूप में यह समस्त जगत् की सृष्टि का मूल कारण है। उसी से विभिन्न शक्तियों का प्रादुर्भाव होता है। दीपावली को इसी महालक्ष्मी का पूजन होता है। तामसिक रूप में वह क्षुधा, तृष्णा, निद्रा, कालरात्रि, महामारी के रूप में अभिव्यक्ति होती है, राजसिक रूप में वह जगत् का भरण-पोषण करने वाली 'श्री' के रूप में उन लोगों के घर में आती है, जिन्होंने पूर्व-जन्म में शुभ कर्म किए होते हैं, परन्तु यदि इस जन्म में उनकी वृत्ति पाप की ओर जाती है, तो वह भयंकर अलक्ष्मी बन जाती है। सात्विक रूप में वह महाविद्या, महावाणी भारती वाक् सरस्वती के रूप में अभिव्यक्त होती है। मूल आद्याशक्ति ही महालक्ष्मी है।

शास्त्रों में भी ऐसे वचन मिल जाते हैं, जिनमें महाकाली या महासरस्वती को ही आद्याशक्ति कहा गया है। जो लोग हिन्दू शास्त्रों की पद्धति से परिचित नहीं होते, वे साधारणतः इस प्रकार की बातों को देखकर कह उठते हैं कि यह 'बहुदेववाद' है। यूरोपियन पंडितों ने इसके लिए 'पालिथीज़्म' शब्द का प्रयोग किया है। पालिथीज़्म या बहुदेववाद से एक ऐसे धर्म का बोध होता है, जिसमें अनेक छोटे-देवताओं की मण्डली में विश्वास किया जाता है। इन देवताओं की मर्यादा और अधिकार निश्चित होते हैं। जो लोग हिन्दू शास्त्रों की थोड़ी भी गहराई में जाना आवश्यक समझते हैं, वे इस बात को कभी नहीं स्वीकार कर सकते। मैक्समूलर ने बहुत पहले बताया था कि वेदों में पाया जानेवाला 'बहुदेववाद' वस्तुतः बहुदेववाद है ही नहीं, क्योंकि न तो वह ग्रीक-रोमन बहुदेववाद के समान है, जिसमें बहुत-से देव-देवी एक महादेवता के अधीन होते हैं और न अफ्रीका आदि देशों की आदिम जातियों में पाए जानेवाले बहुदेववाद के समान है जिसमें छोटे-मोटे अनेक देवता स्वतन्त्र होते हैं। मैक्समूलर ने इस विश्वास के लिए एक शब्द सुझाया था-हेनोथीज्म, जिसे हिन्दी में 'एकैकदेववाद' शब्द से कुछ-कुछ स्पष्ट किया जा

सकता है। इस प्रकार के धार्मिक विश्वास में अनेक देवता की उपासना होती अवश्य है, पर जिस देवता की उपासना चलती रहती है, उसे ही सारे देवताओं से श्रेष्ठ और सबका हेतुभूत माना जाता है। जैसे जब इन्द्र की उपासना का प्रसंग होगा, तो कहा जाएगा कि इन्द्र ही आदि देव हैं, वरुण, यम, सूर्य, चन्द्र, अग्नि सबका वह स्वामी है और सबका मूलभूत है। पर जब अग्नि की उपासना का प्रसंग होगा तो कहा जायेगा कि अग्नि ही मुख्य देवता है और इन्द्र, वरुण आदि का स्वामी है और सबका मूलभूत देवता है, इत्यादि।

परन्तु थोड़ी और गहराई में जाकर देखा जाये तो इसका स्पष्ट रूप अद्वैतवाद है। एक ही देवता है, जो विभिन्न रूपों में अभिव्यक्त हो रहा है। उपासना के समय उसके जिस विशिष्ट रूप का ध्यान किया जाता है, वही समस्त अन्य रूपों में मुख्य और आदिभूत माना जाता है। इसका रहस्य यह है कि साधक सदा मूल अद्वैत सत्ता के प्रति सजग रहता है। अपनी रुचि और संस्कारों और कभी-कभी प्रयोजन के अनुसार वह उपास्य के विशिष्ट रूप की उपासना अवश्य करता है, परन्तु शास्त्र उसे कभी भूलने नहीं देना चाहता कि रूप कोई हो, है वह मूल अद्वैत सत्ता की ही अभिव्यक्ति। इस प्रकार हिन्दू शास्त्रों की इस पद्धति का रहस्य यही है कि उपास्य वस्तुतः मूल अद्वैत सत्ता का ही रूप है। इसी बात को और भी स्पष्ट करके वैदिक ऋषि ने कहा था कि जो देवता अग्नि में है, जल में है, वायु में है, औषधियों में है, वनस्पतियों में है, उसी महादेव को मैं प्रणाम करता हूँ!

आज से कोई दो हज़ार वर्ष पहले से इस देश के धार्मिक साहित्य में और शिल्प और कला में यह विश्वास मुखर हो उठा है कि उपास्य वस्तुतः देवता की शक्ति होती है। यह नहीं है कि यह विचार नया है, पहले था ही नहीं, पर उपलब्ध धार्मिक साहित्य और शिल्प और कला-सामग्री में यह बात इस समय से अधिक व्यापक रूप में और अत्यधिक मुखर भाव से प्रकट हुई दिखती है। इस विश्वास का सबसे बड़ा आवश्यक अंग यह है कि शक्ति और शक्तिमान् में कोई तात्विक भेद नहीं है, दोनों एक हैं।

चन्द्रमा और चन्द्रिका की भाँति वे अलग-अलग प्रतीत होकर भी तत्त्वतः एक हैं-अन्तर नैव जानी मश्चन्द्र-चन्द्रिकयोरिव। परन्तु उपास्य शक्ति ही है। जो लोग इस विश्वास को अपनी तर्कसम्मत सीमा तक खींचकर ले जाते हैं, वे शक्त कहलाते हैं। जो शक्ति और शक्तिमान् के एकत्व पर अधिक ज़ोर देते हैं, वे शाक्त नहीं कहलाते। मगर कहलाते हों या न कहलाते हों, शक्ति की उपास्यता पर विश्वास दोनों का है। जिन लोगों ने संसार की भरण-पोषण करनेवाली वैष्णवी शक्ति को मुख्य रूप से उपास्य माना है, उन्होंने उस आदिभूता शक्ति का नाम 'महालक्ष्मी' स्वीकार किया है। दीपावली के पुण्य-पर्व पर इसी आद्याशक्ति की पूजा होती है। देश

के पूर्वी हिस्सों में इस दिन महाकाली की पूजा होती है। दोनों बातों में कोई विरोध नहीं है। केवल रुचि और संस्कार के अनुसार आद्याशक्ति के विशिष्ट रूपों पर बल दिया जाता है। पूजा आद्याशक्ति की ही होती है। मुझे यह ठीक-ठीक नहीं मालूम कि देश के किसी कोने में इस दिन महासरस्वती की पूजा होती है या नहीं। होती हो तो कुछ अचरज की बात नहीं होगी। दीपावली का पर्व आद्याशक्ति के विभिन्न रूपों के स्मरण का दिन है।

यह सारा दृश्यमान जगत् ज्ञान, इच्छा और क्रिया के रूप में त्रिटुपीकृत है। ब्रह्म की मूल शक्ति में इन तीनों का सूक्ष्म रूप में अवस्थान होगा। त्रिपुटीकृत जगत की मूल कारणभूता इस शक्ति को 'त्रिपुरा' भी कहा जाता है। आरम्भ में जिसे महालक्ष्मी कहा गया है उससे यह अभिन्न है। ज्ञान रूप में अभिव्यक्त होने पर सत्त्वगुणप्रधान सरस्वती के रूप में, इच्छा रूप में रजोगुण प्रधान लक्ष्मी के रुप में और क्रिया रुप में तमोगुण-प्रधान काली के रुप में उपास्य होती है। लक्ष्मी इच्छा रूप में अभिव्यक्त होती है। जो साधक लक्ष्मी रूप में आद्याशक्ति की उपासना करते हैं, उनके चित्त में इच्छा तत्त्व की प्रधानता होती है, पर बाकी दो तत्त्व-ज्ञान और क्रिया-भी उसमें सहायक होते हैं। इसीलिए लक्ष्मी की उपासना 'ज्ञानपूर्वा क्रियापरा' होती है, अर्थात् वह ज्ञान द्वारा चालित और क्रिया द्वारा अनुगमित इच्छा-शक्ति की उपासना होती है। 'ज्ञानपूर्वा क्रियापरा' का मतलब है कि यद्यपि इच्छा-शक्ति ही मुख्यतया उपास्य है, पर पहले ज्ञान की सहायता और बाद में क्रिया का समर्थन इसमें आवश्यक है। यदि उल्टा हो जाये, अर्थात् इच्छा शक्ति की उपासना क्रियापूर्वा और ज्ञानपरा हो जाये, तो उपासना का रूप बदल जाता है। पहली अवस्था में उपास्या लक्ष्मी समस्त जगत् के उपकार के लिए होती है। उस लक्ष्मी का वाहन गरुड़ होता है। गरुड़ शक्ति, वेग और सेवावृत्ति का प्रतीक है। दूसरी अवस्था में उसका वाहन उल्लू होता है। उल्लू स्वार्थ, अन्धकारप्रियता और विच्छिन्नता का प्रतीक है।

लक्ष्मी तभी उपास्य होकर भक्त को ठीक-ठीक कृतकृत्य करती है। तब उसके चित्त में सबके कल्याण की कामना रहती है। यदि केवल अपना स्वार्थ ही साधक के चित्त में प्रधान हो, तो वह उलूकवाहिनी शक्ति की ही कृपा पा सकता है। फिर तो वह तमोगुण का शिकार हो जाता है। उसकी उपासना लोकल्याण-मार्ग से विच्छिन्न होकर बन्ध्या हो जाती है। दीपावली प्रकाश का पर्व है। इस दिन जिस लक्ष्मी की पूजा होती है, वह गरुड़वाहिनी है-शक्ति, सेवा और गतिशीलता उसके मुख्य गुण हैं। प्रकाश और अन्धकार का नियत विरोध है। अमावस्या की रात को प्रयत्नपूर्वक लाख-लाख प्रदीपों को जलाकर हम लक्ष्मी के उलूकवाहिनी रूप की नहीं, गरुड़वाहिनी रूप की उपासना करते हैं। हम अन्धकार का, समाज से कटकर रहने का, स्वार्थपरता का प्रयत्नपूर्वक प्रत्याख्यान करते हैं और प्रकाश का, सामाजिकता का और सेवावृत्ति का आह्वान करते हैं। हमें भूलना न चाहिए कि यह उपासना ज्ञान द्वारा चालित और क्रिया द्वारा अनुगमित होकर ही सार्थक होती है।

अरमानों को मिले पंख

"लड़की मतलब लक्ष्मी का स्वरूप।" पुराने जमाने में जब किसी के घर लड़की जन्म लेती थी तो घर वालों के लिए मानो दुःखों का पहाड़ ही टूट पड़ता है। आगे चलकर उस लड़की को बहुत सारे ताने और जिम्मेदारियों तले दबा दिया जाता था। सबको बस लड़का चाहिए क्योंकि लड़का वंश को आगे बढ़ाता है और शादी में वधु के घर से दहेज के नाम से बहुत सारी संपत्ती साथ लाता है। बड़ा होकर बूढ़े मां-बाप का सहारा भी बनता है। यही मान्यता उस जमाने के लोगों में थी। और लड़कियां दूसरों के घर जाती है और दहेज में बहुत सारे वस्तु और पैसे भी खर्च हो जाते हैं, इस बोझ से सभी को डर लगता था।

हालांकि आज की स्थिति पहले जैसी बिल्कुल भी नहीं है, क्योंकि आज लड़कियां लड़कों के मुकाबले बहुत आगे सफलता के शिखर में पहुंच चुकी है। परंतु पुराने जमाने की परिस्थितियां बहुत अलग थी। लड़कियों की स्थिति बद से भी बदतर थी। अपने सपनों को पूरा करने की आजादी नहीं थी। आगे बढ़ने की आजादी नहीं थी। कोई भी फैसला लेने की आजादी नहीं थी। उन्हें एक दायरे के अंदर सिमट के रहना पड़ता था।

ऐसी ही एक लड़की की कहानी मैं आप सबके सामने प्रस्तुत कर रही हूं। जिसने अपने संघर्ष, बुद्धिमत्ता और शांत शीतल मन से अपने घरवालों का मन जीत लिया और अपनी मेहनत से अपने अरमानों को पूरा किया।

झारखंड के कुंडा नामक गांव में एक माली परिवार साथ रहता था। उनका परिवार मध्यम वर्ग का था। जिसमें एक प्यारी सी लड़की ने जन्म लिया, और उसका नाम उषा रखा गया। हालांकि एक लड़की का जन्म उनके लिए ज्यादा खुशियों का कारण बन नहीं सका। उषा के माता-पिता को लड़की के जन्म से कोई एतराज नहीं था, परंतु उसके दादाजी और दादी को लड़की का जन्म बहुत खल रहा था। उषा थोड़ी बड़ी हुई और जब उषा का विद्यालय में दाखिला करने का समय आया तो उसके दादा दादी ने विरोध किया कि उषा को ना पढ़ाया जाए। उसे बस घर के काम सिखाये जाए। क्योंकि वह शादी करके ससुराल ही जाएगी। घर पर तो रहेगी नहीं। तो इस बात

पर उसके माता-पिता ने मना करते हुए कहा कि हम अपनी बेटी को जरूर पढ़ाएंगे। इसी बात पे सब की बहस हो गई पर अंत में उषा के दादा दादी को मानना ही पड़ा।

उसके माता-पिता ने उसका दाखिला गांव के ही एक सरकारी स्कूल में करा दिया। उषा रोज विद्यालय जाने लगी। क्योंकि उषा बचपन से ही होशियार थी, और बुद्धिमान भी थी उसे हमेशा से पढ़ना बहुत अच्छा लगता था वह मन लगाकर पढ़ती थी। कक्षा में उसके सबसे अधिक नंबर आते थे, वह हमेशा प्रथम आती थी। पढ़ाई अच्छा करने के बावजूद उषा के दादा जी को कोई फर्क नहीं पड़ता था। उषा का गांव छोटा सा था, और वहां के सभी लोगों की सोच एक जैसी थी। गांव के लोग अक्सर उसके दादाजी को भड़काते रहते थे, कि वह जितनी अच्छी पढ़ाई क्यों ना कर ले जाना तो उसे ससुराल ही है, पढ़ लिख कर क्या हासिल कर लेगी एक लड़की।
परंतु उषा के माता-पिता उषा का पूरी तरह से साथ देते थे। क्योंकि उनकी सोच बाकियों की तरह बिल्कुल भी नहीं थी।

उषा अब 14 वर्ष की हो चुकी थी और हर कक्षा में वह हमेशा अव्वल दर्जे में ही आती थी। उसके शिक्षक कक्षा में उससे सवाल पूछते थे कि वह आगे भविष्य में क्या बनना चाहती है, तब बड़े ही निडर भाव से जवाब देती कि वह भविष्य में डॉक्टर बनेगी। क्योंकि उसे दूसरों के जख्म भरना और उनके कष्टों को दूर करना बहुत अच्छा लगता था। और वह कहती कि वह अपने ही गांव में एक छोटा सा क्लिनिक खोलना चाहती है, जहां पर वह कम पैसों में अपने गांव वालों का इलाज करेगी। कुछ वर्षों के बाद उसने दसवीं की परीक्षा दी और पूरे जिले में उसके सबसे अधिक नंबर आये। उषा के माता पिता की खुशी का ठिकाना ना रहा। उन्हें अपनी बेटी पर बहुत गर्व था। उषा को आगे की पढ़ाई के लिए शहर जाना था। परंतु उसे के दादाजी इस बात के लिए बिल्कुल भी तैयार नहीं हो रहे थे। वह पूरी तरह से इस बात का विरोध कर रहे थे कि यह शहर नहीं जाएगी और आगे की पढ़ाई नहीं करेगी। दादा जी ने उषा के पिता से कहा - “इसे और आगे मत पढ़ाओ, अब इसकी शादी कर दो, नहीं तो आगे चलकर बहुत सारा दहेज देना पड़ेगा। परंतु उषा के पिता ने अपने पिता की बात को काटते हुए कहा कि - “मैं अपनी बेटी को आगे जरूर पढ़ाऊंगा। उसकी शादी होगी या नहीं इसकी परवाह नहीं है मुझे। इसके दहेज में क्या खर्चा होगा, कितना होगा, यह मुझे नहीं पता। परंतु मुझे मेरी बेटी का भविष्य देखना है। उसके भविष्य को संवारने में मेरी पूरी संपत्ति ही क्यों ना चली जाए, फिर भी मैं अपनी बेटी को जरूर पढ़ाऊंगा।“

उस रात को उषा के दादा जी और उषा के पिता के बीच इतनी बहस हुई कि उषा के दादाजी ने उन सबको घर से निकाल दिया। अंततः उषा के माता-पिता उषा को लेकर शहर की ओर चले गए।

शहर जाकर उषा के पिता ने उसका दाखिला एक अच्छे से कॉलेज में कर दिया। अब उषा का छोटा परिवार शहर में बस चुका था। उषा अपनी पढ़ाई पूरे मन और लगन से करने लगी समय

गुजरता गया। और अब पूरे 12 वर्ष बीत चुके थे। उषा के घरवालों को दादा दादी से कोई संपर्क ना होने के कारण उनकी कोई खबर नहीं मिल रही थी।

एक दिन उनके घर उन्हीं के गांव का एक आदमी आया और उसने उनको बताया कि उसके दादाजी की तबीयत बहुत खराब है। गांव में अच्छे डॉक्टर ना होने के कारण उनका इलाज अच्छे से हो नहीं पाया, इसलिए गांव के लोग उसके दादाजी को शहर लेकर आए हैं, शहर के एक अस्पताल में उनका दाखिला करवाया है। उषा के दादा जी की तबीयत इतनी खराब हो गई थी, कि रास्ते में ही वह बेहोश हो गए और होश में ही नहीं आ रहे थे। उषा के माता पिता ने जब यह सुना तो वह दौड़ते हुए अस्पताल गए।

फिर उषा के दादा जी का तुरंत ऑपरेशन हुआ और कुछ दिनों के बाद उषा के दादाजी ठीक हो गए। जब उषा के दादाजी पूरी तरह से ठीक हो गए तो उन्हें यह बात पता चली कि उसका ऑपरेशन एक लेडी डॉक्टर ने किया है, जिसके कारण वह ठीक हो पाए। उसके दादाजी उस लेडी डॉक्टर से मिलना चाहते थे, जब लेडी डॉक्टर दादाजी के सामने आई तो थोड़ा मुस्कुराई उसने झुक कर दादा जी के पैरों को छुआ। यह सब देख कर उसके दादाजी को पहले तो कुछ समझ में नहीं आया। वह अचंभित हो गए कि यह डॉक्टर मेरे पैर क्यों छू रही है? लेडी डॉक्टर ने कहा - “दादाजी आप अपनी उषा को आशीर्वाद नहीं देंगे?” यह सुनते ही दादाजी आश्चर्य से डॉक्टर को देखने लगे। सामने उनके बेटा और बहू भी थे। उषा की दादी ने उन्हें बताया कि - “यह और कोई नहीं, आप की पोती उषा है। जो अब डॉक्टर बन चुकी है और जिसने आपके प्राण बचाए है।“

यह सुनते ही दादाजी की आंखों में पश्चाताप के आंसू बहने लगे। उन्होंने उषा को अपने गले से लगा लिया और माफी मांगते हुए कहने लगे कि - “मेरी बच्ची मुझे माफ कर दे। मैंने तुम्हारी काबिलियत को नहीं पहचाना। देख आज तुमने मुझे गलत साबित कर दिया।“ उषा ने अपने दादाजी की आंखों से आंसू पोंछते हुए कहा - “दादा जी आप माफी मत मांगिए। वह तो कल की बात थी, कल ही खत्म हो गई। जो आज है वही सच है। एक खूबसूरत सच। इसलिए कल की बात को भूल जाइए। हम सब आपसे बिल्कुल भी नाराज नहीं हैं। आप आज ठीक हुए हैं, यही सबसे बड़ी खुशी की बात है।“ उषा की दादी ने भी उषा को गले से लगा लिया और उसे प्यार करने लगी। सबकी आंखें नम थी, दुःख से नहीं खुशी से। सभी घर को आ गए और कुछ दिनों के बाद सभी वापस गांव की ओर चल दिए।

उषा भी गांव चली गई। उसने अपने गांव में एक छोटा सा क्लीनिक खोल लिया, जहां पर वह अपने गांव वालों का कम पैसों में इलाज करने लगी। सभी गांव वाले भी बहुत खुश थे।
उषा सबका बहुत अच्छे से इलाज करती थी। उसने अपने माता-पिता के साथ और मेहनत से अपने सपने को सच कर दिखाया। उषा के अरमानों को पंख मिल चुके थे।

दीप्तिस्मिता साहू, +3 द्वितीय वर्ष

नारियों की दशा को दिशा कब मिलेगी?

आज विश्व में नारी मुक्ति आंदोलन का प्रभाव हर क्षेत्र में व्यापक हो गया है। महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति भी सचेत रहना नारी मुक्ति का एक बहुत बड़ा अंग है। हमारे समाज के हर क्षेत्र में कुछ ऐसे नियम है जिनसे बाहर निकलने और जिन्हें तोड़ने में आज भी महिलाओं को सफलता प्राप्त नहीं हुई है। आज भी समाज में कुछ रूढ़िवादी सोच के कारण लड़कियों और महिलाओं को अशुद्ध मानकर समाज से दूर रखा जाता है, जैसे - मासिक धर्म (पीरियड)। आज भी कई ऐसे गांव है जहां पर लड़कियों या महिलाओं के मासिक आने पर उन्हें घर से दूर एकांत निवास में रहना पड़ता है।

एकांत निवास यानि गांव से काफी दूर एक निर्जन स्थान में एक छोटी सी झोपड़ी जो कि कच्चे मिट्टी और पुआल की बनी होती है, ना उसमें किसी प्रकार की सुविधा होती है, और ना ही सुरक्षा। वहां कुछ दिनों के लिए मासिक आई हुई लड़की या महिला को रहना पड़ता है। वहां की झोपड़ी काफी तंग होती है, जिसमें छोटी सी खिड़की बनी होती है। और उस मकान को पीरियड हाउस के नाम से जाना जाता है। मासिक आने पर कुछ दिनों के लिए एक किशोरी या महिला को एकांत झोपड़ी में बिताना पड़ता है।

पीरियड झोपड़ी में शौचालय बनाने के लिए एक साड़ी को बांधते हैं या केले के पत्ते से ही काम चलाती हैं। वहां झोपड़ी में पानी की सुविधा ना होने के कारण उन सब को बारिश के पानी का इंतजार करना पड़ता है या फिर उन्हें गंदे पानी का ही इस्तेमाल करना पड़ता है। परंतु जब बारिश होती है, तो बारिश का पानी पूरे घर में भर जाता है। जिससे उनको कीड़े मकोड़ों का भी

भय रहता है। कई बार सांप के डसने से भी बहुतों की मृत्यु भी हो जाती है। गंदे पानी के इस्तेमाल करने से अनेक प्रकार की जानलेवा बीमारियों से भी उनको गुजारना पड़ता है।

आज भी ऐसे क्षेत्र या गांव हैं जहां पर इस प्रकार की कुप्रथा चल रही है जिसके कारण कई लड़कियों महिला को अत्यधिक पीड़ा सहनी पड़ती है। स्वच्छता के अभाव में रहकर ना जाने कितनों की भयानक संक्रमण के कारण मृत्यु तक हो जाती है। हालांकि अभी हमारा समाज काफी आगे बढ़ चुका है। शहरों और गांव में भी बहुत सारी तरक्की हो चुकी है, परंतु महिलाओं और लड़कियों के मामले में आज भी ऐसे गांव हैं जहां के लोगों की सोच को बदलने की आवश्यकता है। जैसे गढ़चिरौली जिले एटापल्ली और चंद्रपुर के माफिया गोंड जनजाति, छत्तीसगढ़ के बस्तर और आंध्र प्रदेश के कुछ हिस्सों में कुमार गृह (पीरियड झोपड़ी) है। जिसमें कई महिलाओं और किशोरियों को रहने के लिए मजबूर किया जाता है।

इन घटनाओं की रिपोर्ट सरकार को कई बार सौंपी गई है। लेकिन अभी भी कुछ जगहों पर पीरियड्स झोपड़ी मौजूद है जिसे बंद करने की आवश्यकता है। इसे बंद करने के लिए जो कोशिश की गई थी वह विफल हो गई, इसलिए इस रूढ़ीवादी प्रथा को समाप्त करने के लिए पुनः प्रयास करने की आवश्यकता है। परंतु यह समाप्त किसी भी सरकारी कार्यों से नहीं हो पाएगी क्योंकि इस प्रथा की समाप्ति तभी संभव है, जब मनुष्य अपनी सोच में परिवर्तन लाएं जिसके लिए उसे अपने मन से ऐसी रूढ़ीवादी सोच को जड़ से उखाड़ फेंकना होगा।

सोचने वाली बात यह है कि भगवान जिन्होंने हमें यह दिया अर्थात नारी का मासिक आना तो प्रकृति का ही एक हिस्सा है। फिर वह किसी भी ऐसे नारी कि छूने से कैसे अशुद्ध हो सकते हैं

यदि देखा जाए तो यह नारीत्व प्रकृति का सबसे अनमोल उपहार है, जिस पर हमें गर्व होना चाहिए और उसका सम्मान करना चाहिए क्योंकि उसी नारीत्व के कारण नारी एक जीवन को जन्म देती है।

इन सारी बातों से मेरे मन में एक ही सवाल गूंजता है कि 'नारियों की इस दशा को दिशा कब मिलेगी'?

शशिकला, +3 द्वितीय वर्ष

माँ

माँ एक शब्द है जिसका कोई अंत नहीं, और ना ही कोई आकार है।
हम सब का जीवन माँ के बिना अधूरा है। उसकी गोद में आने से पहले, बिना हमारे चेहरे को देखे हमसे प्यार करती है माँ। हमें दुनिया में लाने के लिए अनेक कष्ट और असहनीय दर्द से गुजरती है।

दुनिया में माँ के सिवा किसी और के ऊपर हम भरोसा नहीं कर सकते। माँ बच्चे को हमेशा सही गलत मैं फर्क बताती है। माँ से ही हमें पहला ज्ञान प्राप्त होता है। माँ हमारी प्रथम शिक्षिका होती है। माँ का बच्चा जितना भी बदसूरत हो पर मां के लिए वह हमेशा सबसे अधिक सुंदर होता है। माँ की जगह कोई और नहीं ले सकता।

मेरे हृदय में ईश्वर की तस्वीर में मेरी माँ की छवि अंकित है, जिसकी आराधना हमेशा मैं करती रहूंगी।

मानिनी खिलार, +3 द्वितीय वर्ष

चित्रा मुद्गल

चित्रा मुद्गल (जन्म : 1944) हिन्दी की वरिष्ठ कथालेखिका हैं। उन्हें सन 2018 का हिन्दी भाषा का साहित्य अकादमी पुरस्कार प्रदान किया गया है। उनके उपन्यास 'आवां' पर उन्हें वर्ष 2003 में 'व्यास सम्मान' मिला था। उनका जीवन किसी रोमांचक प्रेम-कथा से कम नहीं है। उन्नाव के जमींदार परिवार में जन्मी किसी लड़की के लिए साठ के दशक में अंतरजातीय प्रेमविवाह करना आसान काम नहीं था। लेकिन चित्रा जी ने तो शुरू से ही कठिन मार्ग के विकल्प को अपनाया। पिता का आलीशान बंगला छोड़कर 25 रुपए महीने के किराए की खोली में रहना और मजदूर यूनियन के लिए काम करना - चित्रा ने हर चुनौती को हँसते-हँसते स्वीकार किया।

चित्रा मुद्गल की प्रारंभिक शिक्षा पैतृक ग्राम निहाली खेड़ा (जिला उन्नाव, उ.प्र.) से लगे ग्राम भरतीपुर के कन्या पाठशाला में। हायर सेकेंडरी पूना बोर्ड से की और शेष पढ़ाई मुंबई विश्वविद्यालय से। बहुत बाद में स्नातकोत्तर पढ़ाई पत्राचार पाठ्यक्रम के माध्यम से एस.एन.डी.टी. महिला विश्वविद्यालय मुंबई से की। चित्रकला में गहरी अभिरुचि रखने वाली चित्रा ने जे.जे.स्कूल ऑफ आर्टस से फाइन आर्टस का अध्ययन भी किया है। सोमैया कॉलेज में पढ़ाई के दौरान श्रमिक नेता दत्ता सामन्त के संपर्क में आकर श्रमिक आंदोलन से जुड़ीं। उन्हीं दिनों घरों

में झाड़ू-पोंछा कर, उत्पीड़न और बदहाली में जीवन-यापन करने वाली बाइयों के उत्थान और बुनियादी अधिकारों की बहाली के लिए संघर्षरत संस्था 'जागरण' की बीस वर्ष की वय में सचिव बनीं।

प्रकाशित कृतियाँ

अब तक नौ कहानी संकलन, तीन उपन्यास, एक लेख-संकलन, एक उपन्यास, एक लेख-संकलन, एक बाल उपन्यास, चार बालकथा-संग्रह, छह संपादित पुस्तकें। गुजराती में दो अनूदित पुस्तकें प्रकाशित। अंग्रेज़ी में 'हाइना ऐंड अदर शार्ट स्टोरीज' बहुप्रशंसित। दिल्ली दूरदर्शन के लिए फ़िल्म 'वारिस' का निर्माण।

कहानियाँ

- जिनावर
- बेईमान
- अढ़ाई गज की ओढ़नी

उपन्यास

- आवां (1999)

पुरस्कार-सम्मान

बहुचर्चित उपन्यास 'एक ज़मीन अपनी' के लिए सहकारी विकास संगठन मुंबई द्वारा फणीश्वरनाथ 'रेणु' सम्मान से सम्मानित। हिंदी अकादमी दिल्ली द्वारा 1996 के साहित्यकार सम्मान से सम्मानित और 2000 में अपने उपन्यास आवां के लिए यू॰के॰ कथा सम्मान से सम्मानित। कृति 'पोस्ट बॉक्स नंबर 203- नाला सोपारा' पर साहित्य अकादमी सम्मान 5 दिसम्बर, 2018 को।

हथियार

- **चित्रा मुद्गल**

अब भी उनकी निगाह मेन्यू से लिपटी हुई है।

उसकी आँखें उनकी ऊपर-नीचे टोहती, सरकती नजर को छूकर अनमनी-सी इधर-उधर उचकती, अपनी बढ़ती ऊब को नियंत्रित नहीं कर पा रही हैं।

बूढ़े होने को आए, जाने इतना समय क्यों लगाते हैं चीजें चुनने में कि उनके स्वाद की ललक ही क्षीण हो जाए? मेन्यू में दर्ज खाद्य वस्तुओं की सूची इतनी लंबी-चौड़ी भी नहीं कि चुनने में भ्रम की स्थिति गह ले! जानते हैं वह और खूब अच्छी तरह से जानते हैं, कितनी मुश्किल से वह उनका साथ पाने के लिए अपने गहरे गुँथे समय में से कुछ समय झटक पाती है। सुबह नींद टूटते ही वह सोचना शुरू कर देती है - आज उसे क्या कुछ निबटाना है और साँझ को उनसे कैसे मिलना है। बीच में कई-कई रोज समय न हथिया पाने के चलते उनसे मिलना संभव नहीं हो पाता। फोन पर बातें करके ही संतुष्ट हो लेना पड़ता है। फोन पर बतियाकर उन्हें संतुष्टि नहीं होती। उन्हें उसकी नौकरी पर खीझ होने लगती है। काम निबटाकर वह क्यों नहीं अपने बॉस से कह पाती कि उसे उनसे मिलने पहुँचना है? कौन-सा कानून उसे मिलने से रोक सकता है? जाने कैसा दफ्तर है उसका! उनके दफ्तर में तो लड़कियाँ रजिस्टर साइन करने के बाद दिखतीं ही नहीं।

बातें सुनते-सुनते वह उनका ध्यान दूसरी ओर मोड़ना चाहती है - उनके जुकाम का मुद्दा उठाकर या उनके साइटिका पेन का हाल पूछ कर। नई किताब कौन-सी पढ़ रहे हैं वे?

'क्या करूँ जुकाम के लिए? 'उसके आड़े हाथों लेते ही वे समर्पण की मुद्रा की ओट हो लेते हैं।

वह सयानों-सी समझाने लगती है। केमिस्ट की दुकान से फौरन विटामिन-सी की गोलियाँ मँगवाएँ। सिर पर तौलिया डालकर सुबह-शाम भाप लें। उनकी आवाज से लग रहा है, उन्हें हरारत है।

उनका जवाब उसे तनिक आश्वस्त कर देता है। उसे अधिक चिंतित होने की जरूरत नहीं। बुखार लगता जरूर है कि उन्हें, मगर थर्मामीटर उनके इस लगने को सिरे से झुठला देता है। कितने अकेले हैं! वह भी इस उम्र में।

जहाँ तक उसे याद है, छह महीने-भर शेष हैं उनके अवकाश प्राप्त करने में। एकाध वर्ष का एक्सटेंशन मिल सकता है उन्हें। एक्सटेंशन पाने के लिए वह विशेष जुगाड़ करने के पक्षधर नहीं हैं। अपने आप मिल जाए तो उन्हें काम करने में कोई आपत्ति भी नहीं। उन्हें पूरी उम्मीद है कि उनके काम की संजीदगी पहचानी जाएगी।

वैसे आज भी उनसे मिलना मुश्किल ही था।

उसकी मेज पर से निबटी फाइलें उठाकर ले जाने आए चपरासी मांदले ने सहसा ही उसे सुखद सूचना दी, 'कपूर साहब लंच के बाद ही चले गए, मैडम! साढ़े चार की उनकी फ्लाइट थी। कोलकाता गए। परसों लौटेंगे, यानी शेष फाइलें वह कल निबटा सकती है। प्रसन्नता की उमड़न दबाते हुए उसने मांदले से जानना चाहा था - अचानक कपूर साहब कोलकाता क्यों चले गए? मांदले रहस्यमयी हँसी हँसा था - उनकी बीवी ने उनके ऊपर तलाक का मुकदमा ठोक रखा है और कल उसकी सुनवाई की तारीख है। बीवी कपूर साहब के साथ रहना नहीं चाहती। बोलती है कि कपूर साहब मर्द नहीं हैं।

उसकी प्रसन्नता काफूर हो गई। मांदले से पूछना चाहती थी, 'कपूर साहब के बच्चे हैं ?'

उनका फोन नंबर मुँह जबानी याद है उसे। सहसा उँगलियाँ नंबर डायल करने लगीं।

संयोग से फोन उन्होंने ही उठाया। उसने उन्हें बताया कि वह चार के करीब दफ्तर छोड़ सकती है। आजाद मैदान क्रॉस कर वह चार बीस तक चर्च गेट 'गेलार्ड' पहुँच जाएगी। उनका क्या कार्यक्रम है?

'सक्सेना के पितियाउत बड़े भाई को हृदयाघात हुआ है आज सुबह। सक्सेना छुट्टी लेकर उन्हें देखने बांबे हॉस्पिटल गया हुआ है। उसका काम भी जिम्मे आ पड़ा है।'

'ठीक है' निचला होंठ ऊपरी दंतपंक्ति के नीचे आ दबा।

'दुखी मत होओ। अच्छा सुनो, तुम पहुँचो गेलार्ड। अपना और श्रीवास्तव का काम पाठक के जिम्मे टिकाकर पहुँचता हूँ चार बीस तक।'

उसे उनकी यही विशेषता भाती है। उसके आग्रह को वे टाल नहीं पाते। काम बहुत महत्वपूर्ण है उनके लिए मगर उससे अधिक नहीं।

सबसे अच्छी बात जो उनकी उसे लगती है, वह है - माँ के विषय में वह उससे कभी कुछ नहीं जानना चाहते हैं। जितना समय वह उसके संग व्यतीत करते हैं, उसके बचपन के दिनों में टहलते रहते हैं। दूसरी शादी क्यों नहीं की उन्होंने? शादी वह करे, जिसे अकेलापन काटे। उस घर में रहते प्रतिपल वह उनके पास बनी रहती है। घर के प्रत्येक कोने में उसकी तस्वीरें सजी हुई

हैं। घर की कड़ी खोलते ही वह किसी भी तस्वीर से बाहर छलाँग लगा, उनके स्वागत में दौड़कर उनकी टाँगों से लिपट जाती है, 'दिखाइए, मेरे लिए क्या लाए हैं?' जेब से उसकी पसंद की चॉकलेट निकालकर वह बैठक में रखे डिवाइडर पर रखी चॉकलेट खाती उसकी तस्वीर के सामने रख देते हैं। चॉकलेट इकट्ठी होती रहती है। मिलने पर इकट्ठी चॉकलेट वे उसे थमा देते हैं। उनके सामने ही वह चॉकलेट के रैपर हटाकर एक के बाद एक खाना शुरू कर देती है और खाते-खाते हँसी से दोहरी होती हुई उस किस्से पर चमत्कृत हो उठती है, जिसे सुनाते हुए वह बताते हैं कि पिछली रात उन्होंने उसके साथ घर की बैठक में जमकर क्रिकेट खेली। बॉलिंग वह इतनी जोरदार करती है कि उसकी गेंद से रसोई की दो खिड़कियों के शीशे चटख गए। ट्रे में रखी कॉन्टेसा रम की भरी बोतल उलट गई।

जब तक वह रसोई से काँच की किरचें बुहारते, कूदकर वह अपने कद से बड़ा क्रिकेट का बल्ला सँभाले उसी तस्वीर में जा छिपी, जो उनके बिस्तर की साइड टेबल पर सुनहरे फ्रेम में जड़ी रखी हुई है। दुष्ट डर गई थी। कहीं माँ से उसे डाँट न पड़ जाए कि तुम इतनी आक्रामक गेंदबाजी क्यों करती हो भला?

अब बताए, वह अकेले कहाँ हैं?

उनसे मिलकर घर देरी से पहुँचने पर उसका एक ही बहाना होता है - जाने क्यों, अंबरनाथ लोकल अचानक रद्द कर दी गई।

लोकल गाड़ियों का बहाना खासा कारगर बहाना है और विलंब से पहुँचने वालों के लिए अचूक रक्षाकवच।

सौतेले पिता, डाबीवली के एक छोटे-से जूता कारखाने में मामूली अधिकारी हैं, जिनकी घर में उपस्थिति घर को चमड़े की असहनीय बू से भर देती है। शायद घर को उस बू से बचाने के लिए ही माँ रसोई में टँगे छोटे-से मंदिर के अगरबत्ती स्टैंड की अगरबत्तियों को कभी बुझने नहीं देती। अक्सर घर देरी से लौटने पर सौतेले पिता भी वही बहाना गढ़ते हैं, जो बहाना वह गढ़ती है। उसे विस्मय इस बात पर होता है कि माँ उसके बहाने पर कभी उग्र नहीं होतीं, जबकि सौतेले पिता का बहाना उन्हें बहाना लगता है।

माँ के सिटकनी-चढ़े बंद कमरे में आती उनकी सिसकियाँ उसे उदास करती हैं।

दीवारों को भेदने वाले उनके आर्त बोल भी, कि कारखाने में किसी स्त्री के साथ चल रही प्रेमपींगों के चलते ही वे घर विलंब से लौटते हैं। लोकल ट्रेन उनकी सुविधानुसार रद्द होती रहती है। सब समझ रही हैं वे। पछता रही हैं। जाने क्यों, उन जैसे रँडुवे के प्रेम के झाँसे में आकर वे

पसीज उठीं और अपनी बसी-बसाई गृहस्थी उजाड़ ली जबकि पहली पत्नी की ताई (दीदी) ने उन्हें फोन करके सतर्क किया था - सुनीता की मृत्यु दुर्घटना नहीं थी, आत्मदाह था।

'चीज पकौड़ों के साथ कसाटा आइसक्रीम खाओगी तुम?'

'इतनी देर में यही चुन पाए आप?' वह खीझ दबा नहीं पाई।

'कसाटा तो तुम्हें बचपन से पसंद है।'

'बचपन पीछे छूट चुका।'

'तुम्हारा नहीं।' उनका स्वर संजीदा हो गया।

'पसंद बदल नहीं सकती?'

'बदल गई होती तो मैं फिर कुछ और चुनता तुम्हारी नई पसंद।' उन्होंने संकेत से बेयरे को पास बुलाया।

'किस बात से ऐसा लगता है आपको?'

'बैठते ही तुम मेन्यू मेरी ओर सरकार देती हो हमेशा, तुम्हें यकीन है, खाने की जो भी चीजें मैं चुनूँगा, तुम्हारी पसंद की होंगी।'

उसे हँसी आ गई। मेज पर मोतिया बिछ गया।

उनकी तुनक कम नहीं हुई, 'अगर यह सच नहीं है तो मेन्यू स्वयं देख लिया करो।'

हँसी रुक नहीं रही थी। उन्हें तुनकाने में उसे मजा आ रहा था, 'अब ऑर्डर भी दीजिए। लिखवाइए बेयरे को।'

ऑर्डर लिखवाने के उपरांत वे मुड़े उसकी ओर, 'हँसी क्यों तुम?'

'मजाक नहीं उड़ा रही मैं आपका।'

'फिर क्या उड़ा रही हो?'

'हँसी इसलिए आ गई कि मैं फिजूल आपसे उलझ रही हूँ। सच यही है, मैं चाहती हूँ मैं वही खाऊँ, जो आप मेरे लिए चुनें। यह भी जानती हूँ, आप इतना वक्त इसीलिए लगाते हैं क्योंकि मेरी पसंद की दस-पंद्रह चीजें गड्डमड्ड होने लगती हैं आपके सामने और आप सोचने लगते हैं, पिछली बार जो कुछ खा चुकी हूँ, इस बार उसे दोहराया न जाए। क्या मैं गलत हूँ?'

उनके चेहरे पर गहरा उच्छ्वास सँवला आया, 'नहीं! लेकिन उसने कभी तुम्हारी तरह नहीं सोचा...'

'जरूरी नहीं था कि सभी एक तरह से सोचें?' यह अचानक माँ बीच में कहाँ से आ गई, जो कभी नहीं आती।

वे लगभग उखड़ आए - 'पैरवी कर रही हो? ठीक है, मगर फिर अगले को भी किसी से यह अपेक्षा नहीं करनी चाहिए थी कि मैं उसी की भाँति सोचूँ, जो उसे पसंद है वही करूँ?'

उसे लगा, वह घुमड़न से उलझ नहीं सकती।

उसे अगले पल यह भी लगा, उसे उठना चाहिए और काउंटर पर जाकर अपनी शिकायत दर्ज करानी चाहिए कि ऐसे क्यों हो रहा है। हफ्ते भर बाद वह यहाँ आई है और यहाँ लगातार 'कम सेप्टेंबर' की वही पुरानी धुन बज रही है, जिसे वह पिछले हफ्ते सुन चुकी है? क्या उनके संकलन में कुछ और अच्छी धुनें नहीं हैं, जिन्हें बदल-बदलकर बजाया जा सके? ऑर्डर आने में अभी देर है। धुनें बदलवाना जरूरी है। वह उठकर काउंटर की ओर बढ़ चली। उसे मालूम है, उसके अचानक उठने और काउंटर की ओर बढ़ने पर वह कोई सवाल नहीं करेंगे। ऐसा नहीं है कि वे सवाल नहीं करते हैं। सवाल करते हैं - कभी-कभी। उसे उनके तीन महीने पूर्व किए गए एक सवाल का जवाब अभी देना बाकी है। सवाल आसान नहीं है। न उसका जवाब इतनी आसानी से दिया जा सकता है। सवाल उसके होने से जुड़ा है। वह है, तो उसे उस 'होने' को महत्व देना ही पड़ेगा। जिम्मेदार व्यक्ति न अपने प्रति गैर-जिम्मेदार हो सकता है, न दूसरों के प्रति। यही उसकी अड़चन है, जिसने उसे ठिठका रखा है।

वह जानते हैं, वह उन्हें बहुत प्यार करती है। उन्होंने बहुत चिरौरी की थी माँ से -उन्हें सब कुछ छोड़कर जाना है, जाएँ। जैसा चाहेंगी, लिखकर दे देंगे। कोर्ट-कचहरी की फजीहत उन्हें पसंद नहीं। हाँ, बच्चे के बगैर जीना उनके लिए कठिन है। दुनिया में उसे आँखें खोलने के साथ ही उन्हें गहरे अहसास हो गया था कि वह उस आँखें मिलमिलाती नन्हीं जान के बिना नहीं रह सकते।

उन्होंने उसके जन्म के समय की अपनी भावनाओं को उससे आठ वर्ष की उम्र में बाँटा था कि उसके जन्म के समय उसे पहली बार देखने पर उसकी दादी ने उनसे कहा था, 'मुन्ना, छोरी बूबहू तेरे जैसी लगे है। अंगड़ाई तोड़ तू ऐसे ही आँखें मिलमिला रहा था, जब पहली दफे सौर में मैंने तुझे दाई की गोद में देखा था।'

उसके आग्रह पर धुन बदल गई।

वातानुकूलित खुनक-भरे वातावरण में राजकपूर की 'श्री420' के गीत 'प्यार हुआ इकरार हुआ है, प्यार से फिर क्यों डरता है दिल...' की मद्धिम छूती-सहलाती-सिहराती धुन तैरने लगी।

बदली धुन ने उन्हें भी अपने साथ गुनगुनाने के लिए मजबूर कर दिया।

'तन्वी'

'बोलो, पा!'

'पुराने गाने पुराने मूल्यों की तरह हैं, नहीं?'

'पुराने गानों में बड़ा दम है। कविता हैं।' 'मूल्य' शब्द से उसने स्वयं को बचाना चाहा।

उन्हें भी समझ में आ गया - वह माहौल को कड़ुवाहट में डुबाने से बच रही है।

बेयरा ऑर्डर ले आया।

चीज बाल्स, जिन्हें वह पकौड़े कहते हैं, बड़ी प्लेट में सजे भाप छोड़ रहे हैं। 'कसाटा' कलबत्ता दो अलग-अलग प्लेटों में है। उन्होंने एक प्लेट उसकी और खिसकाई और चीज पकौड़ा उठाकर दाँतों से कुतरने लगे। उनके दाँतों में उम्र मरोड़े लेने लगी है। पिछले महीने निचले जबड़े की दाहिनी एक दाढ़ को निकलवाया है उन्होंने।

'अजीब चलन हो गया है। किसी भी रेस्तराँ में चले जाओ, अंग्रेजी की धुनें ही बजती हुई मिलेगी वहाँ।'

'रेस्तराँ का चलन ही वहाँ से आया है।'

'क्यों, हमारे यहाँ ढाबे और मिठाइयों की दुकानों नहीं हुआ करती हैं?'

'हुआ करती हैं, मगर उन्हें कभी संगीत से नहीं जोड़ा गया।'

'हो सकता है, वहाँ भी अंग्रेजी धुनें बजने लगी हों।' वह हँस पड़े।

'अगली बार हम लोग किसी हलवाई की दुकान पर मिलेंगे। उड़पी-सड़पी में तो बर्तनों की खनक ही सुनाई पड़ती है।' उसने उनकी हँसी में साथ दिया।

चीज बाल्स खासे कुरकुरे और स्वादिष्ट बने हैं। 'कसाटा' में बर्फ की अकड़ है। उसने चम्मच से अकड़ को खूँदा। खूँदने से निश्चित ही उसकी अकड़ में कुछ नरमी आएगी। आइसक्रीम को पिघलाकर खाना उसे पसंद नहीं। फिर तो रबड़ी का दूध ही पीना चाहिए। उसकी देखा-देखी उन्होंने भी आइसक्रीम को खूँदकर नरम करना शुरू कर दिया। अपनी अकड़ को आदमी कभी खूँदता है?

आइसक्रीम खाते हुए वह उन्हें देख रही है। गले की चमड़ी तेजी-से ढीली हो रही है। वे अब कसरत-वसरत भी नहीं करते। पहले नियमित कसरत किया करते थे। भुजाओं की सख्त

मछलियों पर उससे मुक्के मरवाया करते थे। फिर एकाध साँस छोड़ मछली को चिपकाकर, उसे बाँह में भर चूमते हुए कहते थे - 'तुम्हारी मार के डर से उठकर मछलियाँ भाग गईं।'

माँ के संग वह सौतेले पिता के घर आ गई थी।

स्कूल जाने से पहले उन्होंने ही उसे घर का टेलीफोन नंबर और पता रटवाया था। बच्चों को घर का पता और फोन नंबर भली-भाँति याद होना चाहिए। मुसीबत में काम आता है। तीसरी साँझ माँ और सौतेले पिता के घर से बाहर जाते ही उसने फोन का नंबर डायल कर उनसे बात की थी। वह जैसे उसके फोन का इंतजार कर ही रहे थे। पिछले तीन दिनों से वे दफ्तर नहीं गए थे। बैठे पी रहे थे। उसकी आवाज सुनते ही वे प्रलाप करते हुए से बोले, 'तुम्हें लेने कल मैं डोबीवली आ रहा हूँ, तुम्हारे बिना मैं जी नहीं सकता, मेरी बच्ची!'

'आपने तो कहा था, पा! मैं आपकी बेटी नहीं हूँ।'

'यह तुमसे किसने कह दिया?'

'आपको झगड़े के बीच कहते हुए सुना था।'

'वह तो मैंने, तुम्हारी माँ को नीचा दिखाने की मंशा से कहा था। गुस्से में मैं अंधा हो जाता हूँ।'

'तब फिर मुझे माँ के साथ क्यों आने दिया?'

'माँ की जिद के आगे हार गया। यह भी सोचा, इतनी छोटी बच्ची माँ को छोड़कर कैसे रह पाएगी, रह सकती हो, बोलो?'

'नहीं, रह सकती। माँ को भी मेरे साथ वापस ले आइए।'

'अब नहीं ला सकता। बाकायदा लिखा-पढ़ी हुई है। उस आदमी को अब वह नहीं छोड़ सकती। छोड़ना ही होता तो यहाँ से जाती ही क्यों?'

'पर पा, वह आदमी मुझे अच्छा नहीं लगता।'

'और उस आदमी को तुम?'

'मैं भी उसे अच्छी नहीं लगती।' वह सिसकने लगी थी।

'रोओ मत, मेरी बच्ची। बताओ, तुम्हारी माँ इस बात से परेशान नहीं है?'

'है, पा।'

'तब'

'मुझे अलग कमरे में सुलाने लगी है। मुझे अकेले डर लगता है, पा।'

'तेज होती सुबकियों के बीच उसने उन्हें सूचित किया था - घर की घंटी बजी है। उसका अनुमान है, माँ और सौतेले पिता घर आए हैं। मौका मिलते ही वह उन्हें दोबारा फोन करेगी।'

तेरह वर्ष कैसे कट गए! कट नहीं गए, काटे गए। माँ को उसने कभी भनक नहीं लगने दी - पा और वह कब, कहाँ, कैसे मिलते हैं। माँ उसे प्रतिक्षण चेतावनियों से लादती रही - उनका मरा मुँह देखे, अगर कभी वह अपने पा से बात भी करे। उसे अचरज होता माँ के मुँह से ऐसी भाषा सुनकर। आखिर उनके भीतर घृणा के कितने कुएँ हैं। जो अब तलक उलीचते-उलीचते भी खाली नहीं हुए? उन्हें कभी यह भी खयाल नहीं आया कि किसी बच्चे के लिए कितना मुश्किल होता है, जो उसका पिता नहीं है, उसे पिता कह कर पुकारना! उस घर में रहते हुए उसने सौतेले पिता से कभी कोई बात नहीं की। पढ़ाई में डूबी रहती दिन-रात। कक्षा में सदैव अव्वल आती। अव्वल आने ने ही रेलवे में नौकरी पाने में उसकी मदद की।

उन्हें छींकता हुआ पाकर वह अनायास चिंतित हो आई।

'क्या हुआ? ठंडा खाने का असर है?'

'ए.सी. कुछ बढ़ा हुआ नहीं लग रहा?'

'ठंडक जितनी थी, उतनी ही है, आइसक्रीम नुकसान कर गई। सर्दी आपको वैसे ही रहती है।'

चेहरे को लापरवाही से झटका उन्होंने, 'छोड़ो, छींक के डर से मैं आइसक्रीम खाना नहीं बंद कर सकता।'

'सुड़प-सुड़प' आवाज निकालते हुए वे आइसक्रीम खा जरूर रहे हैं, मगर उनकी निर्निमेष दृष्टि सामने पड़े परदों की सांधों से उलझी जाने कहाँ गुम हो गई है। ऐसी मुद्रा में वे जब भी होते हैं, उसे लगता है, उसके साथ होते हुए भी वे कहीं स्वयं से जा भिड़े हैं। अपनी भिड़ंत से बाहर आ अक्सर वे उसके लिए अपरिचित हो उठते हैं। तनिक हिंसक, जबकि वे हिंसक नहीं हैं। प्रकृति नहीं है उनकी हिंसक।

'तुम्हें मालूम है, तुम्हारी माँ का शक गलत नहीं है उसके बारे में।'

उसने चम्मच चाटते हुए पूछा, "समझी नहीं, किसके बारे में?"

'उसके बारे में जो जूते के कारखाने से घर रोज देरी से लौटता है। है एक मराठी लड़की उसकी जिंदगी में।'

चकित हो उठी। पा को कैसे मालूम? उसने तो कभी कुछ कहा नहीं। उन्होंने कभी कुछ पूछा भी नहीं। फिर? यानी माँ के बारे में सारी जानकारी है उन्हें! रास्ते अलग हो जाने के बावजूद

जानकारी है तो उसे सच स्वीकार करना ही पड़ेगा। उन्हें मालूम है तो वह छिपा भी नहीं सकती। माँ की सिसकियाँ घर की दीवारें फाँद क्या उन तक दौड़ आती हैं?

'हाँ, इन दिनों माँ खासी परेशान रहती है।' उसने स्वीकारा।

उनके स्वर में विद्रूप उतरा, 'खामोशी से सह लेना चाहिए, जैसे मैं सह लिया करता था, जानते हुए कि वह चमड़ेवाले के साथ घूमती है।'

'अब पता चल रहा होगा उसे, अकेला कर दिया जाना कितना खतरनाक होता है।' उन्होंने आगे टिप्पणी की। जैसे उनके सामने वह नहीं, माँ बैठी हुई हो और उन्होंने अपने पंजों में बाघनख पहन लिए हों।

वह भेद नहीं पा रही है उनके चेहरों को। माँ की पीड़ा उनके नासूरों पर फाहा साबित हो रही है।

'उम्र में भी चमड़ेवाला उससे छह साल छोटा है।'

अब नहीं सहा जा रहा है। यह हिंसक व्यक्ति उसके 'पा' नहीं हैं। हों भी तो उसे स्वीकार नहीं। वहीं ठहरे हुए हैं, पुश्तैनी दुश्मन की तरह।

बेयरा तश्तरी में बिल ले आया।

लपककर उसने बिल उठा लिया। उनकी छीना-झपटी के बावजूद पहली बार बिल उसने चुकाया। कमाने के बावजूद उनका बिल चुकाना उसे अभिभावक का संरक्षण लगता रहा है, जबकि घर में वह माँ से अपने खर्च के लिए एक पैसा नहीं लेती, बल्कि हजार रुपया महीना उन्हें पकड़ा देती है। आठवीं कक्षा में आते ही उसने हिंदी पढ़ाने के दो ट्यूशन पकड़ लिए थे।

उसका बिल चुकाना उन्हें खिन्न कर गया।

स्वचालित दरवाजा खोलकर दोनों फुटपाथ पर आ गए।

'तुम घर रहने कब आ रही हो?' उनका सवाल उसकी चुप्पी को खरोचने लगा। बाहर उमस बढ़ गई है। उमस ने उसे अनमना कर दिया था। उमस उससे झेली नहीं जाती। सबसे बुरे लगते हैं उसे उमस भरे दिन लेकिन यह भी सच है कि पा के साथ वह जब भी होती है, उमस उसके पास फटकने से कतराती है। जाने आज क्यों उलटा हो रहा है। लग रहा है, उमस उनके साथ के बावजूद बढ़ रही है और निरंतर बढ़ती ही जा रही है, यहाँ तक कि साँसों में घुलती उसकी खारी आर्द्रता, साँसों को सीने तक पहुँचने नहीं दे रही है।

उसे मालूम है, साथ चलते हुए वह उसकी चुप्पी बरदाश्त नहीं कर पाते। किसी भी क्षण वे इस हिमाकत के लिए उसे टोक सकते हैं। उन्हें कुछ क्षण पहले किए गए अपने सवाल का जवाब

भी चाहिए। सवाल नया नहीं है। तीन-चार महीने पुराना है। उन्होंने कहा था - जल्दी तय कर लो कब तुम चमड़ेवाले के घर से अपना झोला-डंडा उठाओगी। अपनी वसीयत भी उन्होंने तैयार करवा ली है। दो कमरों वाले उनके सुंदर फ्लैट की एकमात्र मालकिन वह है, उनकी बच्ची - तन्वी गुप्ता। उनकी अंतिम इच्छा है, वह अपने घर लौट आए। बालिग हो चुकी है अब वह।

वह सोचती है - वह क्या है आखिर! अपने लिए, उनके लिए माँ के लिए?

माँ ने कहा था, 'किसी भी हालत में मैं तन्वी को तुम्हारे पास नहीं छोड़ने वाली। जानती हूँ - तुम तन्वी के लिए तरसोगे, रोओगे, दीवारों से माथा सिर कूटोगे, कूटते रहो, जीवन पर्यंत कूटते रहो...'

एक साँझ उन्होंने उससे कहा था, 'जिस दिन तुम अपने घर लौट आओगी, उसके पास उसके आँसू पोंछने वाला कोई नहीं बचेगा।'

'बोलो तन्वी कब घर आ रही हो तुम?' उनका स्वर अधीर हो आया।

'किसके?' उसकी कनपटियों पर उमस पिघल रही है।

वे शायद मुस्कराए उसके सवाल पर, 'अपने और किसके।'

'वह तो आपका घर है, पा।'

वह चिढ़-से गए, 'जहाँ रह रही हो, वह किसका घर है?'

'माँ का।' कोई हिचक नहीं थी उसके स्वर में।

'पगली, वही तो मैं कह रहा हूँ, तुम अपने घर लौट आओ।'

'निर्णय ले लिया है, अपने घर ही लौटना चाहती हूँ, पा।'

'तब दिक्कत क्या है?'

'दिक्कत है, घर ढूँढ़ना।

'क्या मतलब?' उनका स्वर गुर्राया।

'मतलब, अब मैं बालिग हो चुकी हूँ पा! और अपने घर में रहना चाहती हूँ। आपके पास ही वन-रूम-किचन किराए पर लेकर।'

उन्हें माटुंगा उतरना है और उसे डोंबीवली। शार्टकट आजाद मैदान ही है बोरीबंदर यानी शिवाजी टर्मिनल पहुँचने के लिए। उसने उनकी बाईं कोहनी धर ली और उन्हें सड़क क्रास करवाने लगी। उसे अचरज हुआ - उसकी पकड़ से उन्होंने अपनी कोहनी नहीं छुड़ाई। हठी बच्चे की भाँति घिसटते हुए ही सही, उसका अनुसरण करते हुए रोड क्रास करने लगे।

जाति

बहुत दिनों बाद मैं अपनी सहेली के घर गई थी। वह दोस्त जो अभी एक बंधन में बंध चुकी थी। कुछ रिश्तो को संजो रही थी। अपना एक परिचय बना रही थी, क्योंकि वह विवाहित थी। उसकी जिम्मेदारियां बढ़ गई थी। 4 दिन रही मैं उसके घर। मैंने देखा कि शादी के बाद कितनी बदल जाती है लड़कियां। ना किसी से बात करने के लिए ही समय मिलता है और ना ही खुलकर सांस ही ले पाती है। बस एक के बाद एक अपनी जिम्मेदारियों को निभाती चली जाती है।

मैं उसके घर गई थी, पर मेरे लिए उसके पास समय कम ही हुआ करता था। वह मुझसे बात करना चाहती तो थी और कुछ समय साथ बिताना चाहती थी, पर काम को अधूरा भी तो नहीं छोड़ सकती थी। जाने के तीसरे दिन मुझसे ना रहा गया तो मैं खुद उसके पास चली गई। वह जो भी काम करती थी, मैं कुछ कुछ कामों में उसका साथ दिया करती रही। इसी बहाने उसके साथ हंसी दिल्लगी भी हो जाती।

सुबह के 10 - 11बजे होंगे। धोबिन कपड़े देने आई थी, मैंने जाकर दरवाजा खोला और उसको अंदर आने का आग्रह किया तो उसने हंस दिया। फिर मेरी सहेली ने उससे कपड़े लेकर उसको विदा किया और मुझसे बोली -

"पागल हो गई है क्या? उसे अंदर बुला रही थी। अगर वह आ जाती तो मुझे फिर से घर धोना पड़ता।"

मैं नासमझ सी उससे पूछ बैठी - "क्यों?"

काम करती हुई उसने कहा -
"इतना भी नहीं समझती, वह धोबिन है, छोटे जाति के लोग। हमारे गांव में वह आ सकती है पर किसी के घर में नहीं।“
"पर ऐसा कब से है पायल! तुम कब से यह छुआछूत के भेद को मानने लगी पहले तो ऐसी नहीं थी।" "ऐसा सब के साथ होता है। पहले मैं अविवाहित थी। सब चल जाता था। पर अब मैं किसीके घर की बहू हूँ तो रीति रिवाज को तो मानना ही पड़ेगा।"
मैंने मुस्कुरा कर पूछा
"जाती भेद कब से एक रीति, परंपरा कुछ भी बन गई।"
उसने मेरी ओर ध्यान से देखा और कहने लगी -
"तब से जब से इंसान पैदा हुआ है। अगर तुझे यह सब न माननी हो तो तू ना मान, पर मेरी जिम्मेदारियों पर सवाल मत कर।"
उसकी सास शायद हम लोगों की बातें सुन रही थी। पायल को कुछ बोलने से पहले ही वह पान खाती हुई हमारे पास आई। उन्हें देखते ही पायल ने घूंघट डाल लिया और फिर से अपने काम में लग गई। उन्होंने मुझे जताते हुए बोला -
"आजकल शहर में रहने वालों के लिए जाति कोई बड़ी बात नहीं है बेटा। वह क्या जाने जात - अजात में फर्क? उनके यहां तो पुजारी भी हाड़ी (उड़ीसा में नीच जाति) के यहां पूजा करने जाता है।"
फिर मैंने उनसे पूछा
"मौसी आपको पता है कि मेरी जाति क्या है।"
"नहीं, क्यों?"
"फिर भी आपने मुझे घर में रहने दिया।"
"हाँ, तुम तो पायल की सहेली हो न?" फिर उन्होंने पायल की ओर देखा।
पायल को नजरअंदाज करते हुए मैंने बोला
"मौसी, मैं भी तो शहर से ही आई हूं। अतः मेरी जाति का कोई ठिकाना कहां? आपके घर में भी मेरा प्रवेश निषेध होना चाहिए ना?"
इतना कहकर मैं वहां से चली आई। सोच रही थी उसी दिन उनके घर से चली जाऊं। पर पायल के पति ने मुझे जाने से रोक लिया। उस दिन खाना गले से नीचे नहीं उतरा था और रात को जानबूझकर जल्दी सोने का नाटक करती रही। पता नहीं क्यों पर उनकी बात का बहुत गहरा असर हुआ। आज भी जाति प्रथा बरकरार है। यह बात हजम ही नहीं हो पा रही थी। मन में यह

भी ख्याल आया कि, क्या मेरे घर में भी ऐसी मानसिकता रही होगी। क्योंकि जाति की चर्चा कभी हुई नहीं हमारे यहाँ।

वहाँ से लौटकर मैंने माँ को सारी बातें बताई। पर उसने कुछ कहा नहीं। उसने बस इतना कहा -

"गांव में रहते हैं तो जाति तो रहेगी ही। बिना जाति पूछे तो कुछ होता नहीं ना।"

मेरे दिमाग में कुछ आया तो मैंने भी यूँ ही पूछ लिया -

"माँ क्या मैं लव मैरेज कर सकती हूँ?"

माँ ने मुझे इस तरह देखा मानो मैं अभी किसीके साथ भागने वाली हूँ।

"क्यों तूने कोई लड़का देख रखा है क्या?"

"नहीं पर अगर भविष्य में कभी प्यार हो गया तो क्या उसकी जात देखोगी?" मैंने गंभीर भाव से पूछा

"हाँ, लड़का या तो ब्राह्मण या नहीं तो खंडायत होना चाहिए।"

"दूसरी जाति का??"

"क्या आदिवासी से शादी करेगी?" उसने गुस्से से पूछा।

"नहीं मतलब नॉन ओड़िया या कुछ भी।"

"न नहीं होगा, हिंदी भाषी या ओड़िया भाषी। इसके अलग नहीं।"

"तो क्या लड़के से उसकी जाति पूछ के प्यार करूँ।"

"ठीक है, हम पर छोड़ दे, हम देख लेंगे तेरे लिए लड़का।“

दिल टूट गया। कोई उत्तर नहीं था मेरे पास, लेकिन उस दिन के बाद माँ को मुझ पर संदेह होने लगा। लेकिन इतना तो तय था, इंसान कितना भी आधुनिक क्यों न बने पर जातिपाँति का भेद भाव कभी पीछा नहीं छोड़ता। दिखावे के लिए सब कहते हैं, सब चल जाता है, पर अंदर से वह कहीं न कहीं शिक्षित गवाँर रह ही जाता है।

पिंकी सिंह, भूतपूर्व छात्रा

डर से निडर बनना

रीता और बबीता दो बहनें थी। रीता, बबीता से छोटी थी, और बबीता बड़ी। रीटा एक शरारती और नकचढ़ी लड़की थी, वह अपनी बात मनवाने के लिए घर में बहुत जिद करती थी। कोई सामान उसे पसंद आ जाए तो फिर क्या कहने, वह उसे पाने के लिए अपने पिता के सामने जमीन पर लेट कर जोर-जोर से रोती थी। फिर जब उसकी पसंद का सामान उससे मिल जाता तो वह खुशी से नाचने लगती, सबको इतरा कर दिखाती। परंतु ठीक इसके विपरीत उसकी बड़ी बहन थी जो बहुत शांत और नरम दिल की थी। उसे जो भी अपने पिता से मिलता है उसीमें खुश रहती। बचपन से ही बबीता बहुत डरपोक भी थी। वह किसी भी उलझन में झगड़े में नहीं पड़ती। दोनों एक ही कक्षा में पढ़ती थी। रीता अपना सामान बबीता को कभी नहीं देती थी, दोनों बहनों में एका ना था। रीटा के स्वभाव की वजह से बबीता भी उससे दूर रहती।

एक दिन की बात है, रीता का झगड़ा उसी कक्षा के एक शरारती लड़के सुरेश से हो गया। दोनों में हाथापाई भी हो गई। बबीता ने अपनी बहन रीता को मनाने की समझाने की बहुत कोशिश की, पर वह ना मानी। कक्षा के समाप्त होने पर रीता और बबीता अपने घर को जाने लगी। रास्ते में अचानक सुरेश पीछे से आया और उसने जोरदार दो चार थप्पड़ रीता के गाल पर जड़ दिए। रीता रोते हुए घर पहुंची और बबीता अचानक यह देखकर डर गई, अपनी बहन की मदद भी ना कर सकी और वह भी अपनी बहन को रोता हुआ देख खुद भी रोने लगी। घर में उसके पिता जी ने उन दोनों से पूछा कि क्या हुआ? फिर रोते रोते रीता ने सारी बातें बता दी। पिताजी ने समझाया कि ऐसे किसी से झगड़ा नहीं करते फिर उसे चुप कराने के लिए उसके पिता ने उसे ₹1 दे दिया और कहा कि जाओ बाहर में कुछ मिठाई खा लो। रीता तुरंत खुश हो गई और बाहर चली गई। पर बबीता अंदर ही अंदर शर्मिंदा थी, कि उसने अपनी बहन की मदद क्यों नहीं की। शायद डर उसके मन में इस तरह बैठ गया था, कि वह अपनी बहन को उस शरारती लड़के से बचा भी ना पाई, यह सोचते हुए उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे। उसने ठान लिया था कि अब उसको डर के नहीं जीना।

अगली सुबह सभी कक्षा में आए। उस दिन मास्टर जी ने सभी को खड़े करके एक एक करके सवाल पूछा। मास्टर जी ने एक अलग ही तरीके से सजा देने का सोचा। मास्टर जी ने कहा - “जो सवाल का जवाब नहीं दे पाएगा, वह खड़ा रहेगा और जो जवाब दे पाएगा वह उस लड़के को थप्पड़ मारेगा।“ फिर क्या था सभी को यही सजा मिलती रही। जो जवाब नहीं दे पाया वह थप्पड़ खाता गया। फिर उस लड़के की बारी आई तो उसे मास्टर जी ने एक सवाल पूछा, वह उसका जवाब दे नहीं पाया। वह खड़ा हो गया। ठीक बगल में बबीता बैठी थी। उस सवाल का

जवाब उसने बहुत अच्छे तरीके से दिया। सजा के तौर पर उसे भी सुरेश को दो थप्पड़ लगाने थे, वह सुरेश के सामने आई और उसने बिना किसी डर के उसे जोरदार खींच कर दो थप्पड़ लगा दिए। उसके थप्पड़ की आवाज पूरे क्लास में गूंज गई। सब लोग यह देखकर आश्चर्य में पड़ गए कि इतनी डरपोक और कमजोर लड़की है, इसमें इतना साहस कहां से आया? बबीता बदल चुकी थी। बबीता का डर खत्म हो चुका था। उसने सुरेश से कहा - "तुमने कल मेरी बहन को धोखे से अकेले में मारा और आज मैंने बिना किसी धोखे के सबके सामने मारा।" बबीता की बात सुनकर सुरेश की आंखें शर्मिंदगी से नीचे झुक गई। रीता यह सब देख कर बहुत खुश हुइ कि उसकी बहन ने उस लड़के से बदला ले लिया। रीता को अपनी बहन के प्रति बहुत ज्यादा प्यार उमड़ा। उसने अपनी बहन को गले लगाया। वह जान चुकी थी कि उसकी दीदी अब किसी से नहीं डरती।

आगे चलकर दोनों बहनें साथ साथ खेलती और मिलकर दोनों काम करती। अब रीता अपने खिलौने बबिता को खेलने देती।

बांगी हांसदा, +3 द्वितीय वर्ष

जिम्मेदारी

हमारे घर के हॉल में दो पंखे लगे हैं, जिनमें एक ही पंखा अक्सर चलता है। और वही धूल लगकर गंदा हो जाता है। जबकि जो नहीं चलता वह साफ रहता है। बाहर से आने वाले लोग उसी पंखे की तारीफ करते हुए कहते हैं, कि उसी की तरह इस पंखे को भी साफ रखा करो।

मैं क्या जवाब क्या दूं ?

उन्हें कैसे समझाऊं कि जो जिम्मेदारी लेता है उसी से लोग और अधिक उम्मीद लगाते तो हैं और उसी में कमियां भी निकालते हैं।

नाम-संगीता प्रज्ञा प्रधान, +3 द्वितीय वर्ष

भगवानदास मोरवाल

भगवानदास मोरवाल (जन्म 23 जनवरी 1960) नगीना, मेवात में जन्मे भारत के सुप्रसिद्ध कहानी व उपन्यास लेखक हैं। उन्होंने राजस्थान विश्वविद्यालय से एम.ए. की डिग्री हासिल की। उन्हें पत्रकारिता में डिप्लोमा भी हासिल है। मोरवाल के अन्य प्रकाशित उपन्यास हैं काला पहाड़ (1999) एवं बाबल तेरा देस में (2004)। इसके अलावा उनके चार कहानी संग्रह, एक कविता संग्रह और कई संपादित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। दिल्ली हिन्दी अकादमी के सम्मानों के अतिरिक्त मोरवाल को बहुत से अन्य सम्मान प्राप्त हो चुके हैं। उनके लेखन में मेवात क्षेत्र की ग्रामीण समस्याएं उभर कर सामने आती हैं। उनके पात्र हिन्दू-मुस्लिम सभ्यता के गंगा जमुनी किरदार होते हैं। कंजरों की जीवन शैली पर आधारित उपन्यास रेत को लेकर उन्हें मेवात में कड़े विरोध का सामना करना पड़ा, किंतु इसके लिए उन्हें 2009 में यू के कथा सम्मान द्वारा सम्मानित भी किया गया है।

विधाएँ : कहानी, उपन्यास, संस्मरण, कविता, संपादन

मुख्य कृतियाँ

उपन्यास : काला पहाड़, बाबल तेरा देस में, रेत, नरक मसीहा, हलाला

कहानी संग्रह : सिला हुआ आदमी, सूर्यास्त से पहले, अस्सी मॉडल उर्फ़ सूबेदार, 'सीढ़ियाँ, माँ और उसका देवता', लक्ष्मण-रेखा, दस प्रतिनिधि कहानियाँ

संस्मरण : पकी जेठ का गुलमोहर (बेनाम और गुमनाम पात्रों की अनकही कथा)

कविता संग्रह : दोपहरी चुप है

संपादन : बच्चों के लिए कलयुगी पंचायत, एवं अन्य दो पुस्तकों का संपादन

सम्मान

श्रवण सहाय एवार्ड, जनकवि मेहरसिंह सम्मान (हरियाणा साहित्य अकादमी), अंतरराष्ट्रीय इंदु शर्मा कथा सम्मान (कथा - यूके, लंदन), शब्द साधक ज्यूरी सम्मान (उपन्यास 'रेत' के लिए), कथाक्रम सम्मान, साहित्यकार सम्मान (हिंदी अकादमी, दिल्ली सरकार), साहित्यिक कृति सम्मान (हिंदी अकादमी), राजाजी सम्मान (मद्रास), डा. अंबेडकर सम्मान (भारतीय दलित साहित्य अकादमी), प्रभादत्त मेमोरियल एवार्ड, शोभना एवार्ड

धरती माता का पत्र

मेरे प्यारे बच्चों,

तुम सब मुझे अच्छी तरह से जानते हो। कविताओं और कहानियों में तुमने मेरे बारे में जरूर पढ़ा होगा। लोग प्यार से, आदर से, मुझे धरती माता कहते हैं। सदियों से मैंने माँ की तरह उनका पालन पोषण किया है। लोगों को मैंने क्या क्या नहीं दिया? अनाज दिया, फल दिए, मकान बनाने को लकड़ी दिया, कपड़े बनाने के लिए कपास दिया। लेकिन ये लोग बड़े स्वार्थी होते जा रहे हैं। ये मेरे जंगल नष्ट कर रहे हैं। मोटर गाड़ियों के धुँए से मेरी हवा विषैली बना रहे हैं। कल कारखानों से गंदा पानी छोड़ कर मेरी नदियां मैली कर रहे हैं। इनको पता नहीं कि ऐसा गैर जिम्मेदार बर्ताव करके वे अपने पांव पर कुल्हाड़ी मार रहे हैं।

अब मेरी उम्मीद तुम जैसे बच्चों से है।

जब तुम बड़े बनोगे अच्छी तरह मेरी देखभाल करोगे। पेड़ पौधे लगाकर अपनी धरती माता को फिर से हरी भरी बनाओगे। खयाल रखोगे तो आवश्यक मात्रा में बारिश होगी उसने अच्छी होगी, सभी और खुशहाली होगी। लेकिन यह संतुलन एक बार बिगड़ गया तो सारा देश एक भयानक रेगिस्तान होगा। अब चुनाव तुम्हारे हाथ में है।

तुम्हारी प्यारी
धरती माता

शशिकला नायक, +3 द्वितीय वर्ष

सच्चा दोस्त

दोस्त वो है जो थाम के रखता है हाथ।
परवाह नहीं उसको कौन है तुम्हारे साथ।

उसकी आँखों में चमक दिखती है,
जब होता है वह तुम्हारे साथ।
गुजर जाता है वक्त मिनटों में जब करते हैं बात,

कुछ सोचना नहीं पड़ता जब
होती है उससे बात, दोस्त वो जो बिन कहे
समझ लेता है हर बात।

दोस्त कुछ भी छिपा नहीं सकते एक दूजे से,
कोई भी राज नहीं, कोई दर्द ग़म नहीं
साथ जब होते हैं दोस्त।

कभी-कभी वह मां की तरह समझाता है
तो कभी पिता की तरह डांटता है।
कभी-कभी बहन बनकर सताता है,
तो कभी भाई की तरह रुलाता है।
जिसके पास है ऐसा दोस्त,
वही मुकम्मल है इस जहां में।

"मुझे भी एक सच्चे मित्र की तलाश है"।

पूजा डाकुआ, +3 द्वितीय वर्ष

सफल इंसान

वही सफल इंसान बन सका।
जो असफलता की प्रताड़ना में,
खुद का निर्माण कर सका।

वही सफल इंसान बन सका।
जो हमेशा साहस और हिम्मत के बल,
से खुद का पहचान कर सका।

वही सफल इंसान बन सका।
जो टूटे सपने को जोड़कर,
अपने माता-पिता के सपने पूरे कर सका।

वही सफल इंसान बन सका।
जो अपने लिए नहीं, बल्कि
खुद की बलि देकर अपने देश को बचा सका।

वही सफल इंसान बन सका।
जो असफलता को प्रेरणा मान कर आगे बढ़ सका,
वही सफल इंसान बन सका।

श्रद्धांजलि जेना, +3 द्वितीय वर्ष

दोस्ती का समय

दोस्ती अगर सच्ची हो, तो रंग लाती है।
दोस्ती अगर झूठी हो, तो टूट जाती है।
दोस्ती का अहसास समय आने पर,
आसमान में नया सूरज लाता है।
वही मखमली किरण जीवन की,
अंधियारे को उजाला बना देती है।
दोस्ती अगर फूल हो तो सुगंध फैलाती है,
उस सुगंध को ना पहचानो तो,बदबू बिखर जाती है।
इंद्रधनुष के सात रंग जीवन में ऐसे आते हैं,
जैसे-की दोस्ती की दोस्ती, एक सतरंगी रंगोली है।
दोस्ती अगर प्यारी हो तो सबको भाती है,
नहीं तो टूट कर बिखर जाती है।
हे मेरे दोस्त इसे संभालना,
कहीं ग़लती से इसके टुकड़े ना हो जाए।

इप्सिता रानी साहू, +3 द्वितीय वर्ष

जिंदगी

काश जिंदगी सचमुच किताब होती,
पढ़ सकती मैं कि आगे क्या होगा?
क्या पाऊंगी मैं और क्या दिल खोएगा।
कब थोड़ी खुशी मिलेगी, कब दिल रोएगा ?
जिंदगी सचमुच किताब होती पढ़ सकती मैं,
उन लम्हों को जिन पर मुझे दिल आया है।
जोड़ती कुछ कुछ पन्ने जिनमें यादों ने मुझे हँसाया है।
हिसाब तो लगा पाती कितना खोया
और कितना पाया है
काश जिंदगी सचमुच किताब होती।
वक्त से आंखें चुरा कर पीछे चली जाती
टूटे अरमानों को फिर से सजाती।
कुछ पल के लिए मैं भी मुस्कुराती,
काश जिंदगी सचमुच किताब होती।

पूजा डाकुआ, +3 द्वितीय वर्ष

सपने

आसान नहीं होता माँ सपनों को भुलाना,
टूटे हुए पंखों के सहारे दुनिया घूम आना,
दबी आहट के साथ कदमों को बढ़ाना,
एक मुस्कुराहट के साथ अपना दर्द छुपाना ,
आसान नहीं होता,
लोगों से नजरें चुराना,
उनके बेरुखे प्रश्न में छिपे तानों से संभलना,
चुपके से रोना और रोते चले जाना,
बिना किसी सहारे अपने अपमान को खुद पीना,
आसान नहीं होता माँ सपनों को भुलाना।

पिंकी, भूतपूर्व छात्रा

विश्वास

टूटा है जो विश्वास एक दिन
फिर जुड़ जायेगा।
एक बार की हार से,
मन हुआ निराश तो क्या
फिर भी, छूटा नहीं है अब भी
दामन स्वयं पर विश्वास का।
हर घड़ी संघर्ष करना है पर,
कभी भी ना टूटे रिश्ता मन से विश्वास का।
मन में विश्वास का ऐसा दीप जला लो,
कि कहीं कोई झोंका ना बुझा पाए,
जो मंजिल दूर है, एक दिन वह पास होगी,
व्यर्थ की चिंताओं से ना मन घबराएगा।
टूटा है जो विश्वास आज,
कल फिर से जुड़ जाएगा।

बाँगी हँसदा, +3 द्वितीय वर्ष

आत्मकथा

रात को सोते हैं,
सुबह उठने के लिए।
सपने देखते हैं,
उन्हें साकार करने के लिए।
कुछ बनते हैं,
अपने पैरों पर खड़े होने के लिए।
पूजा करते हैं,
भगवान को प्राप्त करने के लिए।
हम खुश रहते हैं,
दूसरों को खुश देखने के लिए।

स्वागतिका, +3 द्वितीय वर्ष

कुदरत की छाप

इसका बना बनाया कोई ना समझ पाया।
इसलिए तो हम उसे देते हैं
कुदरत का नाम।
किसने बनाया है यह संसार
पेड़ पौधे किसने बनाये हैं फुर्सत में
जब सूरज का उदय होता है,
तब धूप सुनहरी चमकने लगती है।
रंग बिरंगी फूलों का यहाँ जमावड़ा है।
इनकी खुशबू से महकता सारा संसार है।
इसकी नदियां बहती जाती,
धरती मां के अंगों को चूमती।
पर्वत के शिखर और आकाश को छूती
छोटी बड़ी पक्षी मधुर गीत गुनगुनाते।
फसलों का झूमना मोहित कर देता सबको।
मोर का नाच मन में उमंग भर देता।
दिल खोलकर मैं यह बात कहती हूं कि
मैं कुदरत की छांव में सदा रहती हूं।

इप्सिता रानी साहू, +3 द्वितीय वर्ष

आपकी बात

नमस्ते मैडम

आपको बहुत-बहुत धन्यवाद कि आपने मुझे ई पत्रिका का हिस्सा बनाया। जब भी मैं ई पत्रिका का हिस्सा बनकर कुछ कहानियां या कविताएं लिखती हूं तो मुझे बहुत खुशी होती है। प्रतिमाह ई - पत्रिका के लिए कहानियां कविताएं सभी विद्यार्थी लिखते हैं और उन सभी के लेख पढ़ कर बहुत आनंद आता है। उन सभी पत्रिकाओं में बहुत मनोरंजक बातें और प्यारी सी कविताएं होती हैं जो मन में उमंग भर देते हैं।

आपका फिर से धन्यवाद मैम। इस ई - पत्रिका के द्वारा आपने हमारे अंदर छुपी प्रतिभा को पहचानने का अवसर हमें प्रदान किया इसके लिए जितना भी आपका धन्यवाद करें कम होगा।

बांगी हांसदा, +3 द्वितीय वर्ष

आपका बहुत-बहुत धन्यवाद मैम, आपने हमारे अंदर छिपी प्रतिभा को पत्रिका के द्वारा बाहर लाने का प्रयास कर रहे हैं। हमारे अंदर छिपी प्रतिभा से हमें अवगत करवाया। मैं गर्वित महसूस कर रही हूं कि मैं इस पत्रिका का हिस्सा हूं। जब अपनी स्वरचित कविताएं एवं कहानियां जब इस पत्रिका में आती हैं तो बहुत अच्छा लगता है।

पूजा डाकुआ, वर्ग- +3 द्वितीय वर्ष

नमस्ते मैम। आपको बहुत बहुत धन्यवाद आपने इस पत्रिका को रूप दिया। इस पत्रिका को पढ़कर बहुत अच्छा लगता है। इस पत्रिका में जो कहानियां और कविताएं हैं उससे हमें बहुत कुछ सीखने को मिलता है। मुझे इस पत्रिका का हिस्सा बनाने केलिए आपको बहुत बहुत धन्यवाद ।

श्रद्धांजलि जेना, +3 द्वितीय वर्ष

नमस्ते मैडम आपने इस पत्रिका को बनाया। पत्रिका को पढ़ने के बाद हमारे अंदर एक उत्साह भर जाता है। आपका ये आयोजन समाज को नयी दिशा प्रदान करने एवं विद्यार्थियों की रचनात्मक प्रतिभा को साकार रूप देने में एक सशक्त माध्यम है, जो हमारे अंदर दिखाई देता है। धन्यवाद मैडम जब हम अपनी रचनाओं को पत्रिका में अपने नाम के साथ देखते हैं तो हमारा हर्ष अकल्पनीय होता है। मुझे पत्रिका पढ़कर बहुत अच्छा लगा।

शशिकला नायक, +3 द्वितीय वर्ष

सर्वप्रथम आपको मेरा नमस्कार और बहुत-बहुत शुक्रिया कि आपने मुझे इस काबिल समझा कि मैं ई - पत्रिका में अपने मन की भाषा को अभिव्यक्त कर सकती हूं। मुझे आपने अवसर दिया इसमें अंश ग्रहण करने का। आपका बहुत बहुत आभार है।

इस पत्रिका से मैंने बहुत सी चीजों के बारे में जाना और सीखा कि कैसे कविता में उमंग और रोचकता भरते हैं। कैसे कहानियों में अपनी भाषा देते हैं। इसे व्यक्त करते हैं।
आपका बहुत-बहुत धन्यवाद मैडम

इप्सिता रानी साहू, +3 द्वितीय वर्ष

नमस्ते मैडम

आपको मेरा बहुत धन्यवाद है मैडम कि आपने इस पत्रिका को बनाया और हमें हम पत्रिका का हिस्सा बनकर कुछ काहानियां और कविताएं लिख सकती हूं। आपका फिर से धन्यवाद देना चाहती हूं मैडम कि आपने मुझे इस काबिल बनाया।

स्वागतिका खटेई, +3 द्वितीय वर्ष

आपका बहुत बहुत धायाबद मैडम कि आपने विभाग की ई - पत्रिका को मेरे साथ साझा किया। हालाँकि अस्वस्थता के कारण मैं पिछले कुछ महीनों से, कुछ लिख पाई। पर इस ई-पत्रिका को पढ़ कर मेरे मन में पुनः जिज्ञासा का भाव बढ़ने लगा। मेरी सहपाठियों ने बहुत ही स्पष्ट रूप से अपने भाव को यहाँ प्रकट किया है। खुद से यह आशा रखती हूं कि, अगले महिने में भी कुछ लिखूं, ताकि मुझे भी इन सभी की तरह अपने भाव को प्रकाश करने का मौका मिले।

फिर से आपका बहुत बहुत धन्यवाद मैडम, आपने मुझे इस ई-पत्रिका में अपनी "प्रतिक्रिया" देने का मौका दिया। उन सभी छात्राओं को भी धन्यवाद जिन्होंने ई - पत्रिका के माध्यम से अपने भाव को मुझ तक पहुँचाया।

सुभस्मिता महान्ति, +3 द्वितीय वर्ष

नमस्ते मैडम

सर्वप्रथम मैं आपको बहुत-बहुत धन्यवाद देना चाहती हूं, क्योंकि आपने मुझे इस पत्रिका का हिस्सा बनाया। इसमें जो कहानियां और कविताएं है उसे पढ़कर मुझे बहुत कुछ जानने को मिलता है।

आपका फिर से धन्यवाद मैम आपने मुझे इस पत्रिका में अपनी "प्रतिक्रिया" देने का मौका दिया।

करीना कादिरि, +3 द्वितीय वर्ष

‘कलम’ भुबनेश्वर

चित्रा मुद्गल जी के साथ

https://youtu.be/8GLXHvGpP-Y

‘कलम’ भुबनेश्वर

भगवान दास मोरवाल जी के साथ

https://youtu.be/h9SH6xbiAtc

यादों के गलियारों से

जगन्नाथ रथ यात्रा का आँखों देखा हाल दूरदर्शन के सीधे प्रसारण से

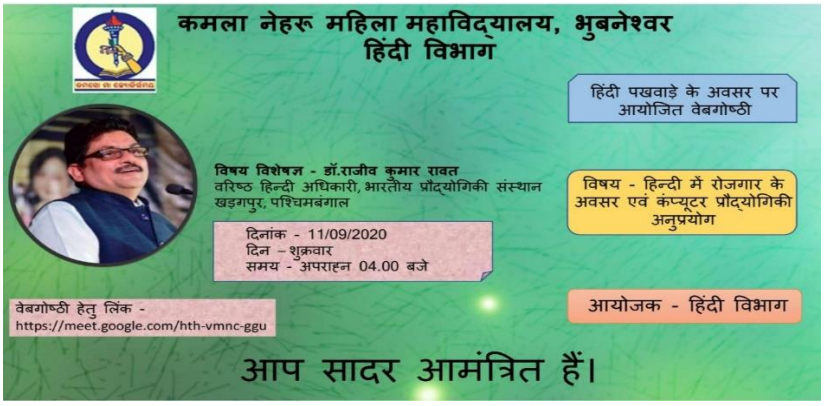

धन्यवाद